साहित्य और समालोचना : एक मूल्यांकन

मुरली मनोहर भट्ट*

शोध सारांश

हिन्दी और कुमाउनी कविता के लेखन क्षेत्र में विख्यात प्रो0 शेरसिंह बिष्ट एक कुशल व प्रखर आलोचक भी हैं, जिन्होंने अनेक समीक्षात्मक ग्रन्थ लिखे हैं। इन ग्रन्थों में 'साहित्य एवं संस्कृति : चिंतन के नये आयाम', 'ध्वनि सिद्धान्त', 'पंत साहित्य और गाँधीवाद', 'हिन्दी भाषा एवं साहित्यः एक अंतर्यात्रा', 'सुमित्रानंदन पंत', 'युगद्रष्टा कबीर', 'युगबोध का साहित्य', साहित्य और समालोचना' व 'समीक्षा की कसौटी पर' आदि प्रमुख हैं। 'साहित्य और समालोचना' ग्रन्थ वर्तमान में हिन्दी आलोचना के गलियारों में चर्चित रहा है। प्रस्तुत शोध अध्ययन प्रो0 बिष्ट के इसी ग्रन्थ के मूल्यांकन तथा विश्लेषण पर आधारित है।

मुख्य शब्द– आलोचना, साहित्य, समालोचना, समीक्षा, आलेख, प्रतिमान, हिन्दी, मूल्यांकन आदि।

आलोचना का अर्थ एवं परिभाषा

आलोचना के लिए हिन्दी में समीक्षा, समालोचना, विवेचन व मूल्यांकन आदि शब्दों का प्रयोग होता है, जिसका सामान्य अर्थ– साहित्यकार द्वारा किसी भी साहित्यिक कृति का अथवा समूचे कृतित्व का मर्यादित, नियंत्रित व तटस्थ दृष्टि से मूल्यांकन करना है। मात्र बाह्य गुण–दोषों तक सीमित न रहकर, जब आन्तरिक प्रकृति अथवा विशेषताओं की छानबीन होने लगती है, तब उसे समीक्षा कहा जाता है। अर्थात् किसी वस्तु या कृति की सम्यक व्याख्या और मूल्यांकन करना ही समीक्षा है।

आलोचना के सम्बन्ध में डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय लिखते हैं–''आलोचना शब्द 'लोच' (जिसे पाणिनी ने अपनी पारिभाषिक शब्दावली में लोचृ लिखा है) से बना है। आ+लोचृ+अन+आ = आलोचना। 'लोच' या 'लोचृ' का अर्थ है– 'देखना'। इसलिए किसी वस्तु या कृति की सम्यक व्याख्या, उसका मूल्यांकन आदि करना ही आलोचना है।''[1]

साहित्य और समालोचना : एक मूल्यांकन

शुक्ल युग हिन्दी आलोचना का स्वर्ण युग कहलाता है। इस युग में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में नए मानदण्ड स्थापित किए। उन्होंने न केवल आलोचना को नित्य नए आयाम दिए, वरन् उसे उच्च शिखर तक भी पहुँचाया। इसलिए शुक्ल जी को हिन्दी आलोचना का प्रवर्तक भी कहा जाता है। यही कारण है कि आज हिन्दी आलोचना निरन्तर नये आयाम ग्रहण करती जा रही है। वर्तमान आलोचना को नए आयामों के साथ स्थापित करने में प्रो0 शेरसिंह बिष्ट का नाम भी विशेष उल्लेखनीय है।

प्रो0 शेरसिंह बिष्ट के बहुचर्चित आलोचना ग्रंथ 'साहित्य और समालोचना' का प्रकाशन सन् 2014 में हुआ। साहित्य के गलियारों में चर्चा का विषय रहा यह आलोचनात्मक ग्रंथ सुप्रसिद्ध आलोचक नामवर सिंह को चुनौती देता प्रतीत होता है। बिष्ट जी द्वारा साहित्य को विविध दृष्टियों से देखने–परखने, समझने, मूल्यांकित एवं विश्लेषित करने का प्रयास इस ग्रंथ के माध्यम से किया गया है और प्राचीन तथा नवीन समीक्षा दृष्टियों की व्यापक पड़ताल की गई है। इसमें समीक्षा को व्यावहारिक बनाने और साहित्य समीक्षा के मानदण्डों की एकता पर विशेष बल दिया गया है। इस ग्रंथ के संबंध में प्रो0 कृष्णचन्द्र लाल लिखते हैं– ''प्रो0 शेरसिंह बिष्ट की पुस्तक 'साहित्य और समालोचना' इस दृष्टि से उल्लेखित है कि इसमें 'साहित्य और समालोचना' संबंधी प्राचीन एवं नवीन, भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टियों की व्यापक समीक्षा करते हुए व्यावहारिक दृष्टि को अपनाने की कोशिश की गई है। साथ ही कुछ व्यावहारिक समीक्षाओं के माध्यम से समीक्षा–कर्म की एकता और महत्ता को स्थापित किया गया है।''[2]

इस आलोचना कृति के प्रथम खण्ड में आठ आलेख हैं, जिसमें पहले पाँच साहित्य के पुराने तथा नए प्रतिमानों पर केन्द्रित हैं और शेष तीन आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा तथा नामवर सिंह पर केन्द्रित हैं। प्रो0 बिष्ट ने उनके प्रतिमानों का विश्लेषण कर एक नई बहस छेड़ी है। द्वितीय खण्ड़ में दस आलेख हैं, जिसमें विभिन्न साहित्यकारों जैसे– कबीर, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, रामधारी सिंह 'दिनकर', चन्द्रकुँवर बर्त्वाल, प्रेमचन्द व शैलेश मटियानी की रचनाओं में विविध पक्षों– दर्शन, चिंतन व विमर्श, भाव–बोध, कथ्य–शिल्प को दृष्टिगत रखते

* शोध छात्र, हिन्दी विभाग, डी0 एस0 बी0 परिसर, नैनीताल

हुए मूल्यांकन किया गया है। तीसरे खण्ड के अंतर्गत हिन्दी की आठ प्रमुख कृतियों– झाँसी की रानी, रतिनाथ की चाची, उर्वशी, आँगन के पार द्वार, विवेक सप्तशती, मुस्कुराते गम, रंग–रंग के दृश्य व वीरांगना चेन्नम्मा की गहन आंतरिक समीक्षा की गई है। इस खण्ड को हम पुस्तक समीक्षा खण्ड भी कह सकते हैं।

इस ग्रंथ के अगर एक आलेख को पढ़ने बैठा जाय, तो फिर औरों को छोड़ने का मन नहीं करता। एक जिज्ञासा मन में बन जाती है कि लेखक ने अगले आलेख में क्या नया लिखा है? प्रो0 बिष्ट एकांगी और पूर्वाग्रह से ग्रसित समीक्षाओं को पूरी तरह नकारते हैं और विभिन्न मतवादी दृष्टियों की गहन समीक्षा भी करते हैं। वे व्यापक और नवीन दृष्टि के आलोचक हैं। उनकी दृष्टि में नवीनता, रोचकता, समदृष्टि, आनन्द, शाश्वतता, लोककल्याणकारी, समाज सापेक्ष युगधर्मिता आदि सभी बातों का समावेश साहित्य में होना ही साहित्य की सार्थकता है। 'साहित्य का दायित्व' शीर्षक आलेख में वे लिखते हैं–

''जो साहित्य स्वस्थ आनंद प्रदान करने वाला, मानवीय मूल्यों का पोषक, समदृष्टि का वाहक एवं जीवन को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने वाला होता है, वही क्षेत्रीय सीमाओं से ऊपर उठकर विश्वजनीन हो सकता है। साहित्य केवल वर्तमान समाज का दर्पण मात्र न रह जाय, वरन् सुनहरे भावी समाज का दर्पण भी दिखाए। ऐसा साहित्य ही सच्चे अर्थों में सार्थक साहित्य हो सकता है। लेखन मात्र ही साहित्य नहीं है। सच्चा साहित्य वही है, जिसे बार–बार पढ़ने का मन करे, फिर भी मन न अघाए, जो पुराना होते हुए भी नया लगे और नया होते हुए भी शाश्वत लगे।''[3]

'कविता की पृष्ठभूमि' आलेख कविता के उत्पन्न होने की स्थितियों की गहन पड़ताल है। लेखक के अनुसार – ''कविता लिखने की कोई उम्र नहीं होती। अन्तर्मन को गहराई तक छूने वाला कोई भी अनुभव कभी भी कविता के रूप में बरसाती जलस्रोत की भाँति प्रस्फुटित हो सकता है। अंतर्मन में जब भी भावों का दबाव बढ़ेगा, वह भीतर न समा सकने के कारण फूटकर बाहर आयेगा ही। वह प्रस्फुटन कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप में भी हो सकता है और मानसिक विकृति के रूप में भी। यह व्यक्ति के विवेक और आत्मशक्ति पर निर्भर करता है कि वह उसको किस रूप में व्यक्त होने देता है, सकारात्मक रूप में अथवा नकारात्मक रूप में। इस तरह कविता एक तरह की आत्माभिव्यक्ति है।''[4]

साहित्य व आलोचना लेखन क्षेत्र में विद्वानों के बीच एक बहुत बड़ी बहस छिड़ी हुई है कि रचना की सार्थकता और वैशिष्ट्य निर्धारित करने के प्रतिमान क्या हैं ? लेखक ने इन्हीं प्रतिमानों पर गंभीर मंथन करते हुए लिखा है– ''कवि की विशिष्टता एवं कलात्मकता इस बात पर निर्भर करती है कि वह किस प्रकार से अपने एकान्तिक अनुभवों और सूक्ष्मातिसूक्ष्म संवेदनों को शब्दों के आइने में प्रतिबिम्बित करे, ताकि वे सहृदयों के साथ तादात्म्य स्थापित कर सकें। ऐसा तभी सम्भव है जब निष्प्राण से लगने वाले शब्दों को भावों के विद्युत प्रवाह से इस तरह से स्पंदित किया जाय कि उनके अर्थग्रहण से दूसरा भी उसी तरह के 'स्पंदन' का अनुभव करने लगे।''[5]

प्रथम खण्ड़ के 'आलोचना में कविता', हिंदी जाति और कविता', तथा 'साहित्य और समालोचना' आलेखों में भी साहित्य के मूलभूत प्रतिमानों पर गहन विचार किया गया है और हिन्दी आलोचना की अनेक सीमाओं को रेखांकित किया है। 'साहित्य और समालोचना' आलेख में साहित्य और आलोचना के सम्बन्ध में विचार करते हुए प्रो0 बिष्ट लिखते हैं– ''साहित्य और आलोचना में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है, दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू की तरह हैं। आलोचना साहित्य विरोधी नहीं, अपितु पूरक है। आलोचना स्वयं में साहित्य की एक विधा है। आलोचना कोई पंडित, मुल्ला, मौलवी या पादरी नहीं है जो साहित्य के स्वरूप अथवा मूल्य निर्धारण के संबंध में कोई आचार–संहिता तय करे अथवा 'फतवा' जारी करे। यह सर्वमान्य तथ्य है कि पहले साहित्य की रचना होती है, तदन्तर उस पर आलोचना लिखी जाती है।''[6]

'साहित्य और समालोचना' के आलेखों के संबंध में प्रो0 जयसिंह 'नीरद' का यह वक्तव्य देखिए – ''साहित्य और समालोचना' उनकी साहित्य–साधना का ऐसा विशिष्ट उत्तमांश है जो न केवल साहित्य के नए और पुराने प्रतिमानों की गंभीर विवेचना से समृद्ध है, बल्कि इन प्रतिमानों पर हिंदी के पुराने और नये कृती रचनाकारों का वस्तुनिष्ठ एवं गंभीर परीक्षण भी करता है।''[7]

प्रथम खण्ड के अन्तिम तीन आलेखों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा और नामवर सिंह की आलोचनात्मक दृष्टि की पहचान और परख भी बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत की गई है। प्रो0 शेरसिंह बिष्ट ने नामवर सिंह की प्रसिद्ध आलोचना कृति 'कविता के नए प्रतिमान' में उल्लिखित स्थापनाओं की गहन एवं विस्तृत समीक्षा की है। मुक्तिबोध के प्रति इनका लगाव और आचार्य शुक्ल, रामविलास शर्मा, डॉ0 नगेन्द्र व अज्ञेय आदि से इनके वैचारिक टकराव (मतभेद) का बेहिचक व निष्पक्ष विश्लेषण किया है। बिष्ट जी ने नामवर सिंह की आलोचना को निष्पक्ष और निरपेक्ष न मानकर, आलोचना जगत में एक हलचल–सी पैदा कर दी है और नामवर सिंह को कटघरे में खड़ा कर दिया है। वे लिखते हैं–

''डॉ0 नामवर सिंह बहुत बड़े आलोचक हैं, इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता। लेकिन वे अपनी आलोचना

में निष्पक्ष और निरपेक्ष नहीं रहे हैं। हिन्दी के अन्य आलोचकों की तरह वे भी पूर्वाग्रह से ग्रसित रहे हैं। इसके प्रमाण स्वरूप कुछ तथ्य प्रस्तुत किए जा रहे हैं। वे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की पुस्तक 'रस मीमांसा' एवं रस सम्बन्धी विवेचन का विरोध नहीं करते, वरन् प्रकारान्तर से समर्थन ही करते हैं। लेकिन नगेन्द्र की 'रस सिद्धान्त' पुस्तक की चीड़–फाड़ करके कूड़ेदान में डालना चाहते हैं। प्रकारान्तर में डॉ0 नगेन्द्र को ही आलोचना के क्षेत्र में अप्रासंगिक बताकर उन्हें खारिज कर देते हैं। इसलिए वे उनकी 'काव्य बिम्ब' पुस्तक की खिल्ली उड़ाकर उसकी चिंदी–चिंदी कर हवा में उड़ा देते हैं। नई कविता के क्षेत्र में मुक्तिबोध को स्थापित करने के लिए अज्ञेय को प्रतिस्पर्धा से बाहर करना चाहते हैं।''[8]

इस सम्बन्ध में प्रो0 कृष्णचंद्र लाल भी लिखते हैं– ''प्रो0 बिष्ट ने 'कविता के नये प्रतिमान' के सन्दर्भ में नामवर सिंह की स्थापनाओं की विस्तृत समीक्षा की है। आचार्य शुक्ल, रामविलास शर्मा, नगेन्द्र आदि से उनकी टकराहटों का भरपूर विश्लेषण किया है और मुक्तिबोध के प्रति उनके अतिरिक्त लगाव को भी रेखांकित किया है।''[9]

खण्ड़ दो के आलेख 'भारतीय साहित्य परम्परा और युगधर्म' में भारतीय साहित्य ने किस प्रकार युगधर्म को निभाया है, इसका समीक्षात्मक आकलन एवं विश्लेषण किया गया है– ''सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक साहित्य वही हो सकता है, जिसमें सत्यं, शिवं एवं सुन्दरं का समन्वय एवं सामंजस्य हो। अतः काव्य– यशः प्रार्थियों को काव्य–सृजन के क्षेत्र में इस दृष्टि से भी सोचने और रचने की आवश्यकता है, तभी मानव जाति का उद्धार एवं कल्याण हो सकता है।''[10]

इसी प्रकार 'रामायण और महाभारत में नैतिकता का संदर्भ' आलेख में 'रामायण और महाभारत' पवित्र धार्मिक ग्रन्थों की मानवीय तथा नैतिक मूल्यों के आधार पर समीक्षा की गई है। महाभारत में भी कई ऐसे अंतर्विरोध सामने आये जो भारतीय संस्कृति के आदर्शों के विपरीत थे, जिनमें मानवता नहीं थी। प्रो0 बिष्ट लिखते हैं– ''महाभारत में कई ऐसे अंतर्विरोध देखने को मिलते हैं, जो भारतीय संस्कृति की स्वीकृत मान्यताओं के विपरीत हैं। भारतीय संस्कृति का आदर्श रूप सत्यं, शिवं, सुन्दरं के अलावा सर्वजनहिताय एवं सर्वजनसुखाय की कामना है। आदर्श यदि मानवता से रहित हो जाते हैं तो अर्थहीन और अप्रासंगिक हो जाते हैं।''[11]

खण्ड़ दो के शेष आलेखों में लेखक द्वारा हिन्दी के महान साहित्यकारों की कृतियों का बारीकी से विश्लेषण किया गया है। इनमें लेखक की पैनी दृष्टि, नई सोच तथा आलोचना के नए–नए आयाम उद्घटित हुए हैं। 'महादेवी वर्मा का स्त्री–चिंतन' आलेख, लेखक की नई सोच व पैनी दृष्टि का विशिष्ट उदाहरण है– ''स्त्री और पुरुष समाज के दो अभिन्न अंग हैं। जिस प्रकार शरीर के किसी एक अंग में विकार उत्पन्न होने पर शरीर स्वस्थ नहीं रह सकता, उसी प्रकार समाज के किसी एक अंग में विकार आने पर वह समाज भी स्वस्थ नहीं रह सकता। वेश्यावृत्ति की विकृति के लिए जिम्मेदार पुरुष अपनी जिम्मेदारी से बच नहीं सकता, क्योंकि उसने नारी को पतन के गर्त में धकेलने का दुष्कर्म किया है।''[12]

बिष्ट जी की आलोचना दृष्टि का एक और सुंदर उदाहरण देखिए– ''स्त्री–पुरुषों के संबंधों से ही समाज का निर्माण होता है और उनमें परस्पर सामंजस्य, सद्भाव, सहयोग, सौहार्द एवं साहचर्य से ही सुखी समाज बन सकता है। स्त्री–पुरुषों का एक–दूसरे को गरियाने से समस्या का समाधान होने वाला नहीं है।''[13] इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि लेखक की आलोचनात्मक दृष्टि समस्या खोजने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि समस्या का समाधान भी खोजती है।

'प्रेमचन्द की रचना–यात्रा और जीवन संघर्ष' तथा 'शैलेश मटियानी का साहित्यिक सफर' आलेखों में इन दोनों महानतम कथाकारों के जीवन–पक्षों तथा रचना–यात्रा के कई छुए–अनछुए पहलुओं को उद्घाटित किया गया है। शैलेश मटियानी के संबंध में प्रो0 बिष्ट का यह आलेख इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि उतने बड़े रचनाकार का उतना व्यापक और विस्तृत मूल्यांकन अभी तक नहीं हुआ है। कहीं न कहीं यह प्रसिद्ध कथाकार आलाचकों की दृष्टि में उपेक्षित रहा है।

प्रो0 बिष्ट के इस बहुचर्चित आलोचना ग्रन्थ के तीसरे खण्ड में सुभद्रा कुमारी चौहान कृत 'झाँसी की रानी', नागार्जुन कृत 'रतिनाथ की चाची', दिनकर कृत 'उर्वशी', अज्ञेय कृत 'आँगन के पार द्वार' हरिशंकर 'आदेश' कृत 'विवेक सप्तशती', रामप्रकाश गोयल कृत 'मुस्कुराते गम' तथा डॉ0 महेश 'दिवाकर' कृत 'रंग–रंग के दृश्य' व 'वीरांगना चेन्नम्मा' रचनाओं की नये सन्दर्भों में समीक्षा की गई है। प्रथम चार साहित्यकारों की रचनाओं पर हिंदी साहित्य जगत में कई आलोचनाएँ लिखी जा चुकी हैं, लेकिन अन्तिम तीन लेख विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, क्योंकि इनमें नये साहित्यकारों की रचनाओं की समीक्षा प्रस्तुत की गई है, जहाँ अभी तक आलोचकों की दृष्टि ही नहीं पहुँची। इन आलेखों के संबंध में डॉ0 दीपक त्रिपाठी ने लिखा है– ''ये ऐसे लेख हैं, जो आलोचना के मूल कर्म को पोषित करते हैं, साथ ही पाठकों को कुछ नया पढ़ने, नया जानने–समझने तथा नई सूचनाएँ प्रदान करते हैं।''[14]

'विवेक सप्तशती' हरिशंकर 'आदेश' का दोहा संग्रह है। वे अमेरिका में रह रहे एक प्रवासी साहित्यकार हैं। प्रो0 बिष्ट ने इस प्रवासी साहित्यकार को अपनी आलोचना का विषय बनाकर विस्तृत आलोचना दृष्टि का परिचय दिया है और

समकालीन साहित्यकारों और आलोचकों को भी इस ओर सारस्वत प्रयास करने का संदेश दिया है। इस आलेख के संबंध में डॉ0 महेश 'दिवाकर' लिखते हैं– ''विवेक सप्तशती' में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की सहज–सरल अभिव्यक्ति हुई है। आदेश जी ने इस काव्य कृति के द्वारा विश्व को भारतीय संस्कृति के विराट संदेश 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को ग्रहण करने हेतु प्रेरित किया है।''[15]

'मुस्कुराते गम' राम प्रकाश गोयल की गजल कृति है। इस काव्यकृति का मूल प्रतिपाद्य प्रेम है। प्रो0 बिष्ट ने इस कृति की समीक्षा प्रस्तुत कर, इसमें निहित भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को उजागर किया है। कुल मिलाकर इस कृति का उद्देश्य जन–जन में दुःखों में भी मुस्कुराते रहो का संदेश प्रसारित करना है। इसी प्रकार डॉ0 महेश 'दिवाकर' की काव्यकृति 'रंग–रंग के दृश्य' जीवन के विविध रूपों का आकलन कर उदात्त भाव–विचार, युगबोध और कल्याणकारी भावनाओं को उजागर करती है। प्रो0 बिष्ट लिखते हैं– ''रंग–रंग के दृश्य' काव्य संग्रह भाव, विचार, यथार्थबोध एवं मूल्यबोध के विविध आयामों को प्रस्तुत करने वाला बहुआयामी भावभूमि पर आधारित काव्य है। यह काव्य प्रगतिवादी सोच का संवाहक है। डॉ0 दिवाकर की विश्वबंधुत्व की भावना एवं उदात्त भाव–विचार उनके मानवतावादी सोच के द्योतक हैं।''[16]

'वीरांगना चेन्नम्मा' भी डॉ0 महेश दिवाकर की एक काव्यकृति है, जिसे प्रो0 बिष्ट ने नारीशक्ति की यशोगाथा कहा है। 'वीरांगना चेन्नम्मा' के संबंध में वे लिखते हैं– ''वीरांगना चेन्नम्मा' जीवन सत्य को कलात्मक रूप में प्रस्तुत करने वाला तथा सत्यं, शिवं एवं सुन्दरम् से समन्वित नारी–शक्ति की यशोगाथा का महाकाव्य है।''[17]

बिष्ट जी यदि कोई बात कहते हैं तो उसकी पुष्टि में तर्कसंगत प्रमाण भी देते हैं। इसलिए डॉ0 महेश 'दिवाकर' इनकी तुलना सुप्रसिद्ध आलोचक हजारी प्रसाद द्विवेदी, शिवदान सिंह चौहान व नामवर सिंह से करते हुए लिखते हैं– ''आज हिंदी में आलोचना विधा को यों तो कई आलोचक अपनी–अपनी तरह से सजा–सँवार रहे हैं, लेकिन उनमें कुछ ही समालोचक अपनी पहचान बना पाये हैं। इनमें हजारी प्रसाद द्विवेदी, शिवदान सिंह चौहान, डॉ0 नामवर सिंह के नाम जहाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, वहीं नई पीढ़ी में डॉ0 शेरसिंह बिष्ट ने हिंदी आलोचना को सजाने–सँवारने के लिए सृजनात्मक कार्य किया है और हिंदी आलोचना को नए आयाम दिए हैं, जिससे उनकी महत्ता सहज ही प्रतिपादित होती है। डॉ0 बिष्ट साहित्य–साधना में रत और प्रचार से विरत होकर नित्य आलोचना जगत को ऊँचाइयों की ओर ले जा रहे हैं।''[18]

इस प्रकार कहा जा सकता है आलोचना के क्षेत्र में रुचि रखने वाले और शोध कार्य करने वाले शोधार्थियों के लिए यह पुस्तक व्यावहारिक आलोचना की दृष्टि से समीक्षा के नए मानदण्ड प्रस्तुत करती है।

संदर्भ

1. वर्मा, धीरेन्द्र (संपादक), हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1, प्रकाशक : ज्ञानमंडल वाराणसी (बनारस), 2020, पृ0 120
2. बिष्ट, शेरसिंह, मेरा रचना संसार : पहचान और परख, अंकित प्रकाशन हल्द्वानी (नैनीताल), 2016, पृ0 381
3. बिष्ट, शेरसिंह, साहित्य और समालोचना, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, अंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली, 2014, पृ0 14
4. वही, पृ0 15–16
5. वही, पृ0 19
6. वही, पृ0 45
7. बिष्ट, शेरसिंह, मेरा रचना संसार : पहचान और परख, अंकित प्रकाशन हल्द्वानी (नैनीताल), 2016, पृ0 387
8. बिष्ट, शेरसिंह, साहित्य और समालोचना' नेशनल पब्लिशिंग हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली, 2014, पृ0 133
9. बिष्ट, शेरसिंह, मेरा रचना संसार : पहचान और परख, अंकित प्रकाशन हल्द्वानी (नैनीताल), 2016, पृ0 385
10. बिष्ट, शेरसिंह, साहित्य और समालोचना, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली, 2014, पृ0 147
11. वही, पृ0 151
12. वही, पृ0 254
13. वही, पृ0 256
14. बिष्ट, शेरसिंह, मेरा रचना संसार : पहचान और परख, अंकित प्रकाशन हल्द्वानी (नैनीताल), 2016, पृ0 400
15. वही, पृ0 395 –396
16. बिष्ट, शेरसिंह, साहित्य और समालोचना, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली, 2014, पृ0 444
17. वही, पृ0 466
18. वही, पृ0 393